तृतीय अध्याय

'मौत का नगर' की कहानियों का कथ्य

अमरकांत सन 50 के कहानीकार हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद का काल अमरकांत का है। राजनीतिक आजादी तो मिली, पर आर्थिक आजादी से आम भारतीय जनमानस वंचित रहा। एक स्थिति और थी, पूँजीवादी के भी पूर्ण विकसित न होने के कारण सामतंवाद सशक्त रूप में मौजूद था। फलतः आजादी के बाद भी गरीब भारतीय जनता सामंती जुल्मों की शिकार हो रही थी। हिंदी के अधिकांश आंदोलनों की प्रकृति, आजादी के बाद यह रही है। भारत में राजनीतिक आजादी लगभग स्थिर हो गयी थी, मगर उसके अंर्तविरोध का जातीय आधार कितना अपना था यह हम उन्हीं दिनों के वर्णन करनेवाली कहानियों से समझ सकते हैं।

3.1 राजनीतिक कहानियाँ

राजनीति ने मानव प्रतिमा को किसप्रकार भ्रष्ट एवं खंडित किया है यह सब स्वातंत्र्योत्तर कहानी में साकार हो उठा है। ''राजनीतिक नेताओं की प्रतिमा का चित्रण 'हत्यारे' कहानी में हुआ है। कहानी में दो युवक गैर जिम्मेदारी, उच्छृंखलता की पराकाष्टा के प्रतीक हैं। स्वातंत्र्योत्तर भारत में जो अपराध कर्मिता फली फूली उसके ये उद्घोषक पात्र हैं। गरीब औरतों के शरीर का भोग लेकर वे उसका पैसा तक नहीं चुकातें। उनके पीछे जो लोग उन्हें पकड़ने को भागते उनकी भी वे हत्या कर देतें। उनके प्रति घृणा और भय सा लगता। घृणा और भय के अलावा ये हत्यारे दयनीय भी हैं। वे निश्चित ही बेरोजगार हैं। इसलिए तो वे वहाँ से भाग जाते हैं। यहाँ सामाजिक विश्रृंखलता से उत्पन्न शंका, भय, निराशा आदि का चित्रण बड़ी कुशलता से अभिव्यक्त हुआ है तथा आज की शासन व्यवस्था पर मार्मिक व्यंग्य कसा है। हत्यारों की नई जाति बुराइयों की अनुभूति से अछूती है। अतः उसे सद्गुणों का अर्थ समझाया नहीं जा सकता। सामाजिक स्तर पर ये हत्यारे राजनीतिक हत्या प्रणाली के मात्र चिन्ह है।''[1]

कथ्य प्रधानता को अमरकांत की कहानियों में एक दूसरे रूप में भी देखा जा सकता है। अमरकांत का अपना ढंग है कि आप सामाजिक जीवन की ट्रैजिक विड़बनाओं को भी हल्के विनोदयुक्त आघात से उद्घाटित करते हैं। अमरकांत की कहानियों में चरित्रों की बनावट एक सतर्क युक्ति के आधार पर की गयी

है। 'महान चेहरा' कहानी में महान चेहरा एक चरित्र है। चेहरे से विचार की ओर जाने वाले इस चरित्र की स्वाभाविक परिणति लखपति बनने की दिशा में हुई है। "यह व्यवस्था आदमी को आत्मकेंद्रित और स्वार्थी ही नहीं बनाती बल्कि इन सब को सिंध्दात के खोल में ढाँक सकने वाली धूर्तता से भी उसे तैयार कर देती है। वह यह सब दुर्भाग्यवश नहीं बल्कि सिध्दांतवश ही करता है। वह अपनी चीज़ों से बेहद प्यार करता है। अपने आराम का बहुत ही खयाल है। अपने सोने का, अपने बैठने का, खाने-पीने का बहुत खयाल रखता है, उसे अपने सुख के ही विचार बहुत प्रिय लगते हैं। अपनी एक भी वस्तु दूसरों को नहीं देता है। बल्कि दूसरों की वस्तू का बार-बार उपयोग करता है। अपनी हर चीज़ से उसको बहुत मोह था। अर्थात पूंजीवादी व्यवस्था आदमी को किस कदर टुच्चा, स्वार्थी तथा आत्मकेंद्रित बनाती है यह तथ्य अमरकांत की 'महान चेहरा' इस कहानी से पता चलता है।"[2]

3.2 ***पारिवारिक कहानियाँ***

अमरकांत की कहानियाँ एक गहरे दायित्व बोध के तहत लिखी गई कहानियाँ हैं। इन कहानियों की स्थितियाँ, घटनाएँ, पात्र एकदम अपने रंगों, रेखाओं में विभाजित हैं। इसलिए आपकी कहानियों में उन सारे पारिवारिक-सामाजिक संदर्भो की ऐतिहासिकता, समय और परिवेशगत सच्चाई मूर्त होती है जिसमें आदमी निरंतर धूर्त, टुच्चा, दयनीय, दंभी, मक्कार होता गया है और सिध्दांत, आदर्श, मूल्य ध्वस्त होते गये हैं।

आजादी के बाद भी विकास के पूँजीवादी पथ पर लगातार बढ़ते रहने के कारण आज भारतीय परिवार की जो स्थिति है, उसका अत्यंत सजीव, मार्मिक और यर्थाथवादी चित्रण 'दोपहर का भोजन' कहानी में हुआ है। अमरकांत इस कहानी में अपनी पीढ़ी के तमाम कथाकारों को बहुत पीछे छोड़ जाते हैं। पूरी कहानी एक निम्नमध्यवर्गीय भारतीय परिवार की है। जिसमें बाप और दोनों बेटें काम की तलाश में दर-दर की ठोकरें खा रहे हैं। श्रम बेचनेवाला वर्ग इस देश में कितना पीड़ित और शोषित है उसकी सही तस्वीर अमरकांत ने अपनी इस कहानी में पेश की है। "रामचंद्र घर का बड़ा लड़का है। उसकी उम्र लगभग इक्कीस वर्ष की है। लंबा, दुबला-पतला गोरा रंग, बड़ी-बड़ी आँखे तथा होठों पर झुरियाँ ऐसे व्यक्तित्व का वह

धनी है। वह एक स्थानीय दैनिक समाचार पत्र के दफ्तर में अपनी तबीयत से प्रफू-रीडरी का काम सीख रहा है।''[3]

दौलत के अंबार पर पलने वाले परिवार में जो उम्र खेलने-खाने की है वही निम्न मध्यवर्गीय परिवार का इक्कीस वर्षीय लड़का प्रफूरीडरी का काम सीख रहा है। काम की तलाश में दर-दर की ठोकरें खाकर जब वह घर जाता है तब थकान और निराशा के कारण उसपर बेहोशी छा जाती है। माँ घबरा जाती है और डरकर साँस देखने लगती है। उसको खाने में केवल दो रोटियाँ, कटोरा भर दाल और चने की तली हुई तरकारी है। मझंले लड़के मोहन जो उम्र की अपेक्षा कहीं अधिक गंभीर और उदास दिखाई देता है। उसे भी दो रोटियाँ, पनियाई दाल और चने की तरकारी मिलती है।

''मुंशी चडिका प्रसाद उनके पिता हैं उनको भी वैसा ही खाना मिलता है। उनकी उम्र पैंतालिस वर्ष के आसपास है किंतु पचास-पचपन के लगते हैं। सिध्देश्वरी हारे-टूटे अपने बेटों और पति की मानसिक स्थिति को समझती है और संभव प्रयास करती है कि उनके तनाव घट जायें। आर्थिक परेशानियाँ पूरे परिवार को दीमक की तरह चाट चुकी है। फिर भी सिध्देश्वरी हारती नहीं है और हर किसी को आशा का किरण दिखा देती है। वह छोटी आयु में भी अपना तथा परिवार के सदस्यों का भरण पोषण करती है। उसका धैर्य भी टूटता है लेकिन वह अपने संपूर्ण बिखराव को प्रकट नहीं होने देती। जब उसने रोटियों की थाली अपने पास खींच ली तब उसमें केवल एक रोटी बची थी। मोटी, भद्दी और जली उस रोटी को वह जूठी थाली में रखने जा रही थी कि अचानक उसका ध्यान ओसारे में सोये प्रमोद की ओर आकर्षित हो गया। उसने लड़के को कुछ देर तक एक टक देखा फिर रोटी को दो बराबर टुकडों में विभाजित कर दिया। एक टुकडे को तो अलग रखा और दूसरे टूकड़े को अपनी जूठी थाली में रख लिया। उसमें पहला ग्रास मुँह में रखा और तब न मालूम कहां से उसकी आँखो से टपटप आँसू बहने चूने लगें। अमरकांत की प्रस्तुत कहानी में समाज के मध्यवर्गीय परिवार की आर्थिक कठिनाइयों और बेरोजगारी का चित्रण मिलता है।''[4]

अमरकांत की 'डिप्टी कलक्टरी' कहानी भी निम्न-मध्यवर्गीय परिवारी की एक तस्वीर पेश करती

है। शकलदीप बाबू ने अपनी जिंदगी के खुबसूरत वर्ष घर और कचहरी के बीच बिता दियें। आर्थिक तंगी ने उनके शरीर को जर्जर कर रखा है फिर भी उनकी ख्वाहिश है कि बेटा पढ़ लिख कर कोई अच्छी नौकरी पा ले, पर वह असफल रहें। शकलदीप बाबू अपने बेटे की 'डिप्टी कलक्टरी' की परीक्षा के लिए कर्जा उठाते हैं। लड़के को पढ़ते-लिखते देखकर मन ही मन प्रसन्न भी होते है और अब चुपके से सिगरेट की पैकेट भी उसके लिये ले आते हैं। लड़का लिखित परीक्षा में चुना भी जाता है, लेकिन इटंरव्यु में पूरी सफलता के बावजूद भी उसे नहीं लिया जाता। शकलदीप बाबू फार्म भरने के दिन से लेकर इटंरव्यू तक मंदिरो के देवी-देवताओं से प्रार्थना करते हैं। तमाम कोशिशों के बावजूद उनका बेटा इटंरव्यू में असफल होता है। पूरी कहानी में अमरकांत ने पूंजीवादी व्यवस्था की विकृतियों का चित्रण किया है। यह एक साधारण परिवार की असाधारण ही नहीं बल्कि मिथ्या आकांक्षा और निराशा की कहानी है। आकांक्षा में एक पूरे परिवार का जीवन टंगा रहता है। नये आकस्मिक क्षण की प्रतिक्षा में जो परिवार के जीवन स्तर को उच्च अभिजात समृध्दि से जोड़ देगा लेकिन होता यह है कि निराशा औसत सुख को भी नष्ट कर देती है।

''अमरकांत ने अपनी कहानियाँ मध्यवर्गीय परिवार से उठाई हैं। आपकी कहानियों का निर्माण जीवंत वस्तुशिला पर होता है इसलिए वह पत्थर की तरह ठोस और कंक्रीट की तरह शक्ति संपन्न होती है। आपकी कहानियों में मध्यवर्गीय परिवार की जिंदगी के अधिसंख्य अनुद्घाटित पक्ष उद्घाटित हुए हैं। आपकी कहानियों में यथार्थ की पकड़ बहुत गहरी है लेकिन अभिव्यक्ति अत्यंत सरल है। 'जिंदगी और जोंक' कहानी में रजुआ जैसे अनाथ लड़के की नारकीय जिंदगी और जिंदगी के प्रति उसके मोह की कथा है। यह कथा मध्यवर्गीय परिवारों की न जाने कितनी विसंगतियों से गुजरती हुई अपने अभिप्रेत अभिप्राय की निष्पति करती है। कहानी का रजुआ अस्तित्व के लिए संघर्षशील प्रतिमा का एक जीता-जागता उदाहरण है। वह अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए दूसरों के घरों में काम करता है। उसमें क्षमता बोध इतना प्रबल है कि विषमतम परिस्थितियों में भी वह मुहल्ले में टिका रहता है, आर्थिक, सामाजिक तथा व्यक्तिगत किसी भी दृष्टि से रजुआ की जिंदगी में कोई अर्थ नहीं है। उसे चोर समझकर पीटा जाता है। लेकिन पीट

जाने के बाद भी खंडहर का वह भिखमंगा मुहल्ले में टिका रहने की हिम्मत करता है।"[5]

जब वह बीमार हो जाता है तब वह जीना चाहता है। "जिंदगी से जोंक की तरह चिपका हुआ है। उसके मुखपर मौत की भीषण छाया नाच रही है और वह जीना चाहता है। लेकिन जोंक वह था या जिंदगी ? वह जिंदगी का खून चूस रहा था या जिंदगी उसका।" इसप्रकार रजुआ बूरी तरह से मरता है। लोग उसके प्रति संवेदना रखते हैं, सहानुभूति दिखाते हैं पर उसे उठाकर अस्पताल में नहीं पहुँचाते बाद में नगर निगम के आदमी उसे उठाकर ले जाते हैं। इस कहानी के रजुआ की प्रतिमा दारूण परिस्थितियों तथा अस्तित्व का संकट झेलनेवाली ऐसी प्रतिमा है, जो जिंदगी से कसकर पकड़े है, तथा मौत को झेल रही है। रजुआ की प्रतिमा लेखक की बनायी प्रतिमा न होकर परिवेश की भयावह परिस्थितियों की प्रतिमा है। स्वातंत्र्योत्तर कहानी में रजुआ जैसी असंख्य प्रतिमाएँ उभरी हैं।

अमरकांत की 'असमर्थ हिलता हाथ' इस कहानी में माँ टूटते परिवार की करूणा अपने में समेटे हुए है। कहानी की मीना दिलीप से प्रेम करती है। दिलीप मीना के भाई से कह देता है कि वह मीना से शादी करेगा पर भाई को यह स्वीकार नहीं है। वह मीना को धमका देता है, "मैनें आइदा तुमको कभी दिर्लीप के साथ देख लिया तो मार डालूंगा। वह अस्तीन का सांप है जो रोज खिलाने-पिलाने का बदला दिया है। नीच जाती के लोगों से दोस्ती करने का यही नतीजा निकलता है।"[6] जब माँ को मीना के प्रेम का पता चलता है तो माँ एक तीखी घुटन अनुभव करती है। तथा कहती है, हे भगवान ! इसने हमारी सारी इज्जत चौराहे पर फाड़ दी। मैने पैदा होते ही इसका गला क्यों नहीं घोट दिया ? वह मीना को मारती पीटती है और कमरे में बंद भी रखती है। किंतु धीरे-धीरे उसे मीना के प्रति ममता जागती है। इस प्रस्ताव पर परिवार को वह कुछ कहना चाहती है।

अमरकांत कहानी के अंत में लिखते हैं "मीना का चेहरा स्याह हो गया था। उसकी आँखें आँसुओं से भरी थीं। वह एक क्षण अनिश्चित ढंग से खड़ी रही। फिर तेजी से माँ की चारपाई के पास जाकर बोली, 'अम्मा माफ करो, मैं वचन देती हूँ कि मैं शादी वहीं करूंगी जो तुम्हारी इच्छा थी। लेकिन माँ की तबीयत

कमजोर होने लगी। इस माँ की प्रतिमा बेटी के प्रति ममता से युक्त है पर यह माँ परंपरागत संस्कारों से जुझ रही है। उसका यह स्वीकार वस्तुतः हृदय परिवर्तन पर आधारित न होकर जीवन की सच्चाई की समझ पर आधारित है जिसमें मानवीय भावनाओं का सहज समर्थन भी है।

स्वतंत्रता के बाद देश की सूत्रधार बनी पीढ़ी के चालाक और मक्कार लोगों ने धन और प्रतिष्ठा का अर्जन किया। ऐसे अवसरवादियों ने मूल्यों को अपने हित के अनुरूप परिभाषित करके तथा स्थितियों में अनियंत्रित विपर्यय पैदा करके आनेवाली पीढ़ी के लिए इसके अलावा कोई विकल्प नहीं छोड़ा कि अपने पूर्ववर्तियों की तरह वह भी अवसरवादी बनकर धन और प्रतिष्ठा के लिए अपने सिध्दांत और आदर्शो को हित में प्रचलित करें। ऐसी ही 'लड़की की शादी' यह कहानी व्यवस्था की विकृति को रेखांकित करती है। जिसमें सामान्य व्यक्ति भी विशिष्ट व्यक्ति के नक्शेकदम पर चलता अपने सिध्दांतों का उपयोग अपने ही बचाव और समृध्दि के लिए करने जाता है। कहानी का कृष्णमोहन प्रभावशाली धनी नेतानुमा आदमी की काली और बदशक्ल लड़की से शादी के लिए तैयार होकर न केवल अवसरवादी बन जाता है बल्कि अपने कृत्य को सिध्दांत और आदर्श द्वारा समर्थित बताकर यह साफ कर देता है कि दुनिया में इन शब्दों का कोई अर्थ नहीं रह गया है और पूँजीवादी व्यवस्था ने उनमूल्यों को बड़ी निर्ममता से ध्वस्त कर दिया है।

''कहानी में लड़की का पिता जो नेतानुमा बुध्दिजीवी है जो बेहद चालाक है अपने को विचारक और विद्‌वान कहता है। साधारण कार्यकर्ता के रूप में जनसभाओं में भाषण देता है। धीरे-धीरे अपनी चालाकी से वह धन तथा शक्ति दोनों का स्वामी हो जाता है। उसकी इकलौती बेटी है। जो लाड़ प्यार के कारण कुछ सीख ना सकी। वह देखने में बदसुरत, कानी, थुलथुल शरीरवाली, स्वभाव से हठी, घमंडी और क्रोधी है। पिता अपनी लड़की की शादी के लिए अच्छा सा लड़का फँसाना चाहता है। वह कई जगह प्रयत्न करता है पर उसे सफलता तब मिलती है जब उसके हाथ कृष्ण मोहन नामक युवक आता है। कृष्णनाथ को उसने नौकरी दिलायी थी। कृष्णमोहन से लड़की के संबंध में झूठ बोलता है, उसे उंची नौकरी दिलाने का लालच देता है और अंत में कृष्ण मोहन को फंसाने में सफल हो जाता है। वह छत्र का ऐसा

बखेड़ा खड़ा करता है कि कृष्ण मोहन स्वयं को लड़की के पिता का अहसान मंद मानता है।''[7]

किंतु चरित्र के निर्माण के पीछे कहीं न कहीं वह तर्कहीन समाज भी है जहाँ व्यावसायिक उन्नति का चमत्कार भी है। इस तर्कहीन व्यवस्था का प्रतीक नगर या मकान है। नगर जंगल बन गया है और मौत का नगर बन गया है जिसमें रहकर इन्सान इन्सान नहीं रह सकता। ''मकान कैसा होना चाहिए ? मकान की जरूरत क्यों है ? मकान सर्दी-गर्मी, आंधी-पानी, ओला-पत्थर से रक्षा करता है, मकान एक छाया देता है, जिसके नीचे इन्सान सुख के साथ सो सकता है। मकान में रहकर हमें गर्व होता है कि हमारा भी कोई अस्तित्व है, मकान आदमी को हँसाता है, संतोष देता है, उसमें जोश भरता है, उसको ऊँचा उठाता है, उसको आगे बढ़ाता है ऐसे ही हँसते हुए मकान में आदमी रहना पसंद करता है।'' लेकिन कुछ मकान ऐसे होते हैं जिनमें तकलीफ ही तकलीफ होती है। उसमें हर काम उल्टा होता है। उसमें रहकर हर जगह मात खानी पड़ती है। आशा और विश्वास खत्म हो जाता है। ऐसा ही मकान कहानी में मनोहर का है।''[8] इस सनक और चमक में सुखद व्यवस्था की हकिकतों की मौजुदगी में उस सुख की कल्पना करना भी गोया सनकीपन है। यह यथार्थ और कल्पना, निराशा और आशा, वास्तविकता और स्वप्न का द्वंद्व है। वास्तविकता मकान के अंदर है और इच्छाएँ एवं उनकी पूर्ति मकान के बाहर है। इसीलिए घर से जब मनोहर निकलता है तब उसका मन अपने ही आप पश्चाताप से भर उठता है। उसके मन में अपनी बीवी और बच्चों का असीम प्यार उमड़कर लहरें लेने लगता है। उनको जितना वह प्यार करती है उतना कोई भी किसी को न करता होगा। यह मकान से बाहर होने शासक व्यवस्था से बाहर होने की कल्पना से उत्पन्न स्वप्न अनुभव है।

मनोहर उस वर्ग का प्रतिनिधि है जिसमें आने वाले लोग निरंतर उदयोग करते और असफल होते रहने की प्रक्रिया में मन और शरीर से इतने जर्जर हो जाते हैं कि किसी भी बात की तार्किक संगति नहीं बिठा पातें। दुर्दम्य जिजीविषा, असीम अनुराग और गहरी सुझ-बुझ के रहते हुए भी वे किसी भी मामले में संतुलित नहीं रहतें। भय, आंतक, क्रोध की विचार हीन आवेगात्मकता में टूटते है। मनोहर की समस्या आज के उस निम्नवर्गीय आदमी की समस्या है जो जीवनेच्छा से भरपूर, भावनाओं से संपन्न और सुझ-बुझ

का धनी होते हुए भी इतना झकझोरा हुआ है कि हर जगह शून्य का विस्तार पाता है।

आज की व्यवस्थाद्वारा पैदा की गई विसंगतियों का ही परिणाम है कि युवावर्ग की शक्ति और सामर्थ्य का उपयोग केंद्रिय मानवीय तत्वों मूल्यों के अनुकूल न होकर ऐसी प्रतिस्पर्धा में होता है जिसमें दूसरों को अपमानित और नष्ट करने का कुत्सित संतोष प्राप्त होता है। 'विजेता' कहानी आज की उक्त विसंगति और उसके साथ जुड़ी हुई छटपटाहट को बड़े अर्थपूर्ण ढंग से मूर्त करती है। विजेता शब्द में निहित आज की तमाम उपलब्धियों और मान प्रतिष्ठा के प्रतिमानों पर चोट करती है।

'विजेता' कहानी बदले की भावना का ट्रैजिक अंत है। अपनी बहन से मित्र को प्रणय विनोद करते देख एक व्यक्ति के मन में यही आता है कि वह मित्र की पत्नी को प्रलोभन चातुर्य से फँसाये और मित्र को अपमानित करें। इसमें होता यह है कि वह सचमुच ही मित्र की पत्नी को चाहने लगता है क्योंकि प्रतिशोध की भावना गयी नहीं है इसलिए वह अपने ही प्रेम का प्रचार कर देता है। एक दिन मित्र को इस बात का पता चल जाता है तो वह अपनी पत्नी की हत्या कर देता है। विजेता ने मित्र घात तो किया ही, लेकिन सीधी-सादी औरत को अपनी वासना का शिकार बना कर उसकी गृहस्थी उजाड़ दी। अब इस विजेता की आँखों में आँसू आने लगें और मन में आ रहा था 'काश वह अपनी आँखें खोल पाती तो वह उससे माफी माँग लेता। काश उसको यह बता पाता कि मैं कितना झूठ, दंभी और कमीना हूँ। लेकिन उसकी आँखें उसीतरह बंद रही। फिर शाम होते-होते वह मर गयी। उसके पति को गिरफ्तार कर लिया गया। बदले की भावना का परिणाम यह होता है कि इन्सान अपने मित्र से धोखा बाजी करता है। अमरकांत ने इस तथ्य को वस्तुगत स्थिति के द्वारा व्यक्त किया है।

3.3 ***आर्थिक कहानियाँ***

अमरकांत मूलतः प्रगतिशील और मानव-मूल्यों के कहानीकार हैं, आपकी कहानियों में अधिक मानवीय संवेदना है। अर्थ जीवन का महत्त्वपूर्ण पुरुषार्थ है, संसार में अर्थ का मूल है परिश्रम और यही परिश्रम बौध्दिक भी हो सकता है और शारीरिक भी।

15198

'मूस' कहानी उस भारतीय मानस की वेदना को सफलता पूर्वक चित्रित करती है। इसमें आज़ादी के बाद भी आर्थिक आजादी की छटपटाहट का चित्रण है। संवेदना का एक विचित्र रूप आपकी कहानी में मिलता है; जिसके माध्यम से लेखक ने जीवन के यथार्थ रूप को प्रस्तुत किया है। मनुष्य को अपनी नूतन, मूल्यवता के साथ जीवित रहने के लिए प्रेरित करती है। "'मूस' देश, समाज, जाति की बृहत् गौरव या व्यर्था का दर्जा भी न हासिल कर पाने वाले उस जीवन की कहानी है जिसकी अस्ति और क्रियाशीलता का दायरा, मानापमान की आकांक्षा, चिंता से परे शरीर और मन के क्षणिक सुखः दुख के आवेग में जीते रहने तक ही सीमित है। उच्चवर्ग की श्रेष्ठता तथा जीवित बनाये रखने के लिए उसे बदलने की उच्चवर्ग की श्रेष्ठता तथा जीवित बनाये रखने के लिए उसे बदलने की हर कोशिश को नाकामयाब किया जाता है। ऐसा ही चित्रण अमरकांत ने 'मूस' कहानी में किया है।"[9] दो स्त्रियों के बीच पिसते हुए मूस का चरित्र विद्रूप में बदल गया है। मूस दूसरों के घरों में पानी भरने का काम करता है पर अब सरकारी नल आने के कारण उसका काम निकल गया है। अब वह बतिया के सहारे जी रहा है। बतिया उसकी पत्नी है लेकिन दोनों बार-बार झगड़ते रहते हैं। बतिया भी दूसरों के घरो में काम करती है। जब मूस के जीवन में मूनरी आती है तो वह अपने पुरुष दंभ का अनुभव करता है अब मूस और परबतिया उसके सहारे जी रहे हैं। जब थोड़े दिनों के बाद मूनरी उसे छोड़कर निकल जाती है तब मूस का जीवन अंधमय हो जाता है। जब वह पूरी तरह से निचुड़ कर जिंदगी से विदा लेने को है तब उस पर कृपा करती हुई और छोटा बना देती है। उसको लगातार छोटे पन में भी कोई संवेदना नजर आती है जिसका संकेत इन पंक्तियों में है "मूस का जीवन मालूम कैसा होने लगा। उसको लगा कि अगर उसने उस दिन मुनरी को काँवर से मारा न होता तो वह उसे छोड़कर कभी न जाती। उसके हृदय में एक अपराध पीड़ा और आकांक्षा उमड़ घुमड़कर उसको बेचैन करने लगी।" यह सजग मानवता का चित्रण है जो निम्नवर्ग के लोगों में दिखायी देता है। इस अवसर पर उसकी सहानुभूति और सच्चे प्रेम का चित्रण करके कहानीकार ने मुनरी के सुख को नैतिक स्वीकृतिप्रदान की है।

परिश्रम, सुख-दुख और व्यवहार कुशळता ऐसी चीजें है जो जीवन के किसी भी क्षेत्र में सफलता के

लिए निहायत जरूरी है लेकिन 'गगनबिहारी' कहानी में जो नवयुवक है वह बहुत कुछ महत्त्वपूर्ण करने और उसकी संभावित उपलब्धियों के स्वप्न देखते रहता है। कुछ शुरू करने के पहले ही उसके हाथ पाँव फूल जाते हैं। यह एक चरित्र प्रधान कहानी है उसमें स्वप्नशील और निष्क्रिय चरित्र का चित्रण किया है। जो हर रोज नये मंसूबे बांधता है लेकिन करता कुछ नहीं है।

इस कहानी का नवयुवक सुंदरलाल बी.ए. करने के बावजूद भी उसे नौकरी नहीं मिली है। सुंदरलाल उन सीधे सादे नवयुवकों में से एक है, जो कठिन काम को बहुत आसान समझते हैं। मां-बाप की अंतिम संतान होने के कारण बहुत ही लाड प्यार मिला था। इसलिए वह सोचता है कि परिश्रम करके वह एक दिन सफलता की चोटी पर पहुँच जायेगा। लेकिन करता कुछ नहीं था सिर्फ स्वप्न ही देखता है और स्वप्नों की दुनिया में ऐसे अनेक तर्क बांधता है कि उसका एक भी तर्क पूर्ण नहीं हो जाता है। परिवारवालो को वह भ्रम में ही रख देता है। सुंदरलाल आर्थिक रूप से संपन्न होते हुए भी वह कुछ करता नहीं है। सिर्फ अपने खयालों में ही जीता है। कहानी के अंत में वह बीमार हो जाता है, उसकी तबीयत अक्सर बीमार रहती है। वह निराश हो जाता है परंतु उसके भीतर अब भी दृढ़ विश्वास था कि वह एक दिन खूब तंदूरस्त और तगड़ा हो जायेगा और कठिन परिश्रम करके अपने परिवार का और देश का नाम ऊँचा करेगा।

नौकरों को शोषक गैर-जरूरी होते ही नौकरी से हटा देते हैं। ऐसे कितने बालबच्चें हैं जो अपना बचपन मजदूरी करने में खो देते हैं। उन पर झूठें इल्जाम लगाकर उसका बचपन गवां देते हैं। ऐसे ही एक बच्चे का वर्णन 'बहादुर' कहानी में किया है। बहादुर एक बालक है जो घर की आर्थिक परेशानी की वजह से दूसरों के घर में काम करने चला जाता है। बहादुर के माध्यम से अमरकांत ने एक घरेलू नौकर का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है। नौकर चाकर मारपीट खाते ही रहते हैं यह कहानी का स्वीकृत वाक्य आदमी की उस क्षुद्रता और हीन-भावना को जाहिर करता है जिसके तहत वह दूसरे आदमी को अमानवीय तरीके से इस्तेमाल करके अपनी प्रतिष्ठा निर्मित करने की कोशिश करता है।

''बहादुर बहुत ही हँसमुख और मेहनती लड़का है। वह आने से घर में सभी को आराम मिला है।

वह घर के सभी लोगों का काम करता है। उससे कभी कोई गलती नहीं होती थी और ना शिकायत अगर भूल से कोई काम रह गया तो उसे मार खानी पड़ती है। एक दिन साहब के यहाँ रिश्तेदार आते हैं और चोरी का इल्जाम बहादुर पर लगाते हैं। क्योंकि उनके रूपये चोरी हो गये थें। बहादुर सबको चिल्ला-चिल्ला के कहता है कि मैंने चोरी नहीं की, मैंने रूपये नहीं लिये लेकिन घर के सभी लोग उसकी सुनते नहीं है और उसे पीटते हैं। बहादुर बिल्कुल निर्दोष था उसने चोरी नहीं की थी। रिश्तेदार तो खाली हाथ आये थें क्योंकि उनके पास रूपये ही नहीं थें। उन्होंने एक बहाना बनाया था और इस बहाने का शिकार बहादुर हो जाता है। उसपर चोरी का झूठा इल्जाम लगाया जाता है। कहानी के माध्यम से नौकर की जिंदगी का मार्मिकता से चित्रण हुआ है।''[10]

3.4 **सामाजिक कहानियाँ**

हिंदी कहानी में अमरकांत से पहले शायद ही किसी लेखक ने व्यंग्य को इसतरह सामाजिक धरातल पर प्रतिष्ठित करके उसका ऐसा सार्थक और सर्जनात्मक उपयोग किया है।

'' 'म्यान में दो तलवारें' इस सच्चाई पर से परदा उठाती है कि किस प्रकार व्यवस्था अपनी कुचाल से आदमी को पंगु बनाकर टुच्चेपन में छोटी-छोटी बातों के लिए एक दूसरे को अपमानित करने की कोशिश में लगा देती है और फिर उनके जायज हकों पर बिना किसी खतरे के प्रतिबंध लगाये रहती है। ऊपरी तौर पर दो स्थानीय कवियों के टुच्चे विरोध और अर्थहीन स्पर्धा की कहानी है। अमरकांत वस्तुतः यह संकेत करना चाहते हैं कि लोगों की इस आपसी लड़ाई से अन्य लोग कैसे लाभ उठाते हैं और विवेकहीन किस्म की लड़ाई कैसे उसके हाथ मजबूत करती है। वेतन वृध्दि के नोटिस के उत्तर में उनके काम के घंटो को बढ़ा दिया जाता है। 'विकल' और 'मदमस्त' की इस अर्थहीन आपसी लड़ाई ने उसका विवेक इस सीमा तक कुंठित कर दिया है कि भले बूरे का निर्णय किये बिना वे हमेशा एक दूसरे के विरोध में ही खड़े नजर आते हैं। 'विकल' को नीचा दिखाने के लिए ही 'मदमस्त' प्रबंधकों की चापलूसी करने के लिए अपने को तैयार करता रहा है लेकिन ऐन वक्त पर वह कुछ और ही कर बैठता है। प्रबंध को दिए गए विरोध पत्र में उसका भी

नाम है झूठे इल्जाम लगाकर उसे मुअत्तिल करने की धमकी दी जाती है। मदमस्त सोचता है कि प्रबंधों की चापलूसी के लिए उसको तैयार कर रहे हैं उससे कोई कुछ नहीं कहेगा। लेकिन जो होता है वह उसकी योजना और सोच के बगैर भी होता है। अनजाने ही उसमें एक विवेकभरी अकड़ पैदा होती है और वह विरोध पत्र से अपना नाम वापस लेने से इन्कार कर देता है और कम-से-कम थोड़ी देर के लिए ही सही 'विकल' के विरोध की बात एकदम उसके दिमाग से चली जाती है। आदेश को लेकर राजशेखर 'मदमस्त' मूर्ख की तरह देखता हुआ बाहर चला आता है। उसके दिल की सबसे बड़ी तमन्ना दिल में ही रहती है। उसको अपने से ऐसी उम्मीद नहीं थी। लेकिन अपनी ही इच्छा और उम्मिदों के विरोध में जाने का निश्चय वह कहता है।''[11]

''फ्लाश के फूल' यह वयस्कों के कृत्रिम रोमांस की कहानी है। कहानी उनके विद्रुप स्वभाव को पूरी तरह रेखांकित करती है जो जिंदगी से रस लेने के बहाने अपने को छलते हैं। इस कहानी में रामनवल किशोर अपने एक मित्र को अपनी जवानी के दिनों की कहानी सुनाते हैं कि जमीदारी के दिनों में कैसे तरह तरह के मजे कियें, घर गृहस्थी छोड़कर जमींदारी में पड़े रहते थें और जिसकी बहू बेटी को चाहा उठवा लिया किसकी मजाल थी कि जो उनके सामने आता और उनका विरोध करता। ''ऐसा ही एक बार 15-16 वर्ष की अंजोरिया के साथ हुआ। उसपर नजर पड़ते ही उसके बाप भुलई को बूरीतरह से पीटा जाता है और बाद में उसके प्रति हमदर्दी दिखा देते हैं। यह एक साजिश ही थी। बाद में वही अंजोरिया दो-तीन साल तक उनकी पालतू बकरी बनकर रहती है, उनके प्यार के इस नाटक में इतनी बूरी तरह डूब जाती है कि अपनी ससुराल जाने को मना कर देती है और एक दिन उनके सामने प्रस्ताव रखती है कि वह उसे कहीं भगाकर ले चले। गाँववालों से दूर शहर में मकान लेकर उसे एक रखैल की तरह रख लें। नवलकिशोर के अंदर कोई कह रहा था नवलकिशोर, तुम आज तक शैतान के चक्कर में रहे वही शैतान तुम्हारी इज्जत, जमीन-जायदाद, बाल-बच्चें सभी कुछ छीनकर तुम्हें बरबाद करना चाहती है और यह बात सच थी। एक लालची औरत में ऐसी ईमानदारी और लगाव का कारण क्या हो सकता है ?''[12] माया का असली रूप यही देखने

को मिला। उसे उल्लू बनाकर उनका पैसा रूपया बरबाद करती रही। नवलकिशोर पश्चाताप की आग में जलता और रोता रहा।

कहानी दो परस्पर विरोधी जीवन-मूल्यों को उभारती है। वह उस ढोंग की ओर संकेत करती है जो रायनवलकिशोर जैसे लोगों की सबसे बड़ी पूंजी है और समाज में जिनका सारा व्यापार उसी के सहारे चलता है। इस कहानी में सामाजिक बदलाव के एक पहलू पर व्यंग्य किया गया है।

दूसरा पहलू उभरता है 'छिपकली' इस कहानी में। इस कहानी में एक ओर सामंत जमीनदार अपने नाम बदलकर ठेकेदार व्यवसायी, भूस्वामी, जोतदार बन गए हैं और आज भी मजदूर, किसानों, भूमिहिनों को शोषण, बेकार, बलात्कार का शिकार बनाये हुये हैं तो दूसरी तरफ पूँजीवादी व्यवस्था ने मालिक और गुलाम के रिश्तों को एक नया नाम दे दिया है।

भूत आदमी को कीड़ा-पतंगा बनाकर 'छिपकली' की शकल में भी उस पर वार करता है जो कीड़े को पता नहीं चलने पाता। छिपकली का वार बहुत आकस्मित और अचूक होता है। रामजीलाल निंचले होंठ को दाँत से दबाए हुए था जैसे वह कुछ सुलझा रहा हो। इसी समय उसका ध्यान एक छिपकली की तरफ जाता है जो दीवार पर चुपचाप चिपकी थी और उसके सामने कुछ दूरी पर एक काला कीड़ा फड़फड़ कर रहा था। रामजीलाल सोचता है अब यह छिपकली पहले छोटी और दुमकटी थी लेकिन अब उसकी दुम जम आई है और वह मोटी भी हो गयी है। अब छिपकली कीड़े की ओर दौड़ी परंतु इसी समय कीड़ा उड़कर नीचे फर्श पर पट से गिर गया है।

छिपकली रामजीलाल रूपी काले कीड़े की पीछे इसीतरह जीवनभर पड़ी रही है। जब उनकी जिंदगी ने कोई सुखद मोड़ लेना चाहा, तब छिपकली ने उनपर हमला किया और वे फर्शपर धम्म से गिर पड़ें। छोटी दुमकटी छिपकली की तरह मोटा और दुमदार होते गिरगिट की तरह रंग बदलकर पूँजीवादी से समाजवादी और फिर तमाम संस्थाओं के अध्यक्ष संरक्षक के रूप में धनपति होते देखते रहते हैं।

3.5 धार्मिक कहानियाँ

धार्मिक कटुरता के कारण समाज में विभिन्न सम्प्रदायों के बीच दंगे होते रहते हैं। भारत में हिंदू-मुस्लिमों के बीच साम्प्रदायिक दंगो का होना यह आम बात है। जिसका साक्षात्कार हम कभी भी साम्प्रदायिक दंगे के अवसर पर कर सकते हैं। अमरकांत की 'मौत का नगर' यह कहानी सांप्रदायिक दंगो के संदर्भ में लिखी गयी है। लेखक ने कहानी में ऐसे संकेत दिये हैं जो वातावरण को भयावह व्यंग्य से जोड़ते हैं। याने कहानी में भय तथा आतंक का वातावरण आदयंत विदयमान है। कहानी में भय तथा आतंक साम्प्रदायिक भेदभाव के कारण उत्पन्न हुआ है। मानवीय संबंधों के जिस ताने-बाने को बुना गया है उसमें भय तथा त्रासकारी आशंका सर्वत्र व्याप्त है।

''कहानी में हिंदू-मुसलमानों के आपसी कटुमधुर संबंधों का वर्णन किया है। स्वाधीनता के बाद भी समय समय पर हिंदू-मुसलमानों के सांप्रदायिक दंगे किस प्रकार आयें दिन भारत में होते रहते हैं यही इस कहानी में बताया है। जब राम घर से निकलता है तो चारों ओर दंगाई का भयानक वातावरण छा गया है। वह चूपचाप लोगों की बातें सुनता है। उसको लगा कि जैसे कोई उसके दिल को ऐंठकर रक्त को निचोड़ रहा हो। आजादी के बाद दोनों मोहल्लों के लोग प्रेम से रहने लगे थें। लेकिन बाहर से आये लोग मोहल्ले को बदनाम करते रहें और आपस में लड़ते झगड़ते रहें। पूरी कहानी में यह भय और आंतक प्रारंभ से लेकर अंत तक है।''[13]

3.6 व्यंग्यात्मक कहानियाँ

'सप्ताहांत' एक व्यक्ति स्वभाव की दिलचस्प व्यंग्यात्मक कहानी है जो छोटी-छोटी जरूरतों के तर्क से संपर्क में आये हर व्यक्ति को धोखा दे जाता है और अंत में लाटरी के प्रलोभन में उन्हीं से ऐसा मूर्ख बनाया जाता है जो उसकी शक्ति को अनेक दिनों के लिए खत्म कर जाता है। कहानी में दूसरों को तकलीफ पहुँचाकर एक विकृत संतोष का अनुभव करनेवाला पात्र अपने निकम्मेपन तथा अच्छेपन को बेशर्मी के

साथ रहकर अपमान सहता रहता है, महत्त्वाकांक्षा के पूरे होने के विश्वास से दूसरों को धोखा देता है और खुद किसी बड़ी उपलब्धि के झूठ से धोखा खाकर घायल पशु की तरह छटपटाता रहता है।

"कहानी की शुरूवात लॉटरी के लगने से हुई है। इसलिए रामसंजीवन के जीवन में पूर्णतः एक सुखद घटना चलती है। घर में आनंदमय वातावरण छा जाता है। सभी खुशी से झुम रहे थें लेकिन सुबह के अखबार से पता चलता है कि रामसंजीवन की लाटरी नहीं खुली और जनक बाबू ने बदला लेने के लिए झूठी खबर फैला दी थी। बाद में रामसंजीवन मुहल्लें वालों से बचकर बाहर निकल जाता है, लगातर चलता जाता है गलियों, बाजारों के बाहर निकल कर कहीं पार्क में घुमता है और थक कर एक बरगद के पेड़ के नीचे लेट जाता है। कहानी में पूर्णतः लाटरी का स्वप्न दिखाया गया है। जो परिणाम के रूप में रामसंजीवन भोगता है।"[14]

व्यंग्यात्मक कहानी का दूसरा पहलू 'काली छाया' है। इस कहानी में अज्ञात युवक रात में चोर समझा कर पीटता है वही दिन के उजाले में डॉट-फटकार करनेवाले लोगों का सहज सहानुभूति का पात्र हो जाता है। जहाँ कोई आदमी एक सोयी हुई लड़की की चारपाई के पास आता है तो मोहल्ले में शोर हो जाता है और उसे मोहल्लेवाले लोग चोर समझकर पीटते हैं और रात्रभर एक पेड़ से बाँध देते हैं वह जोर-जोर से चिल्लाकर कहता है कि मैं चोर नहीं हूँ। लेकिन कोई भी सहानुभूति प्रगट नहीं करता। जब सुबह होती है तो उसका असल्ली चेहरा मालुम पड़ता है तब उनके दिल उदारता, करूणा और पश्चाताप से भर जाते हैं। लोग कहने लगे बेकार में ही बहुत मार खा गया और अब छोड़ देना चाहिए। जब उसको छोड़ दिया गया तब वह मोहल्ले के लोगों पर जोर-जोर से गरजने लगा मोहल्ले पर बज्जर गिरे, सबका नाश हो, हे ईश्वर इनका बदला लेना, कलियुग आ गया है, यह शहर नर्क में जायेगा सबको कोढ फूटेगा, सबका अंग-अंग जलेगा। उनको किये का फल जरूर मिलेगा। झूठे बेइमान है यह सब। झूठे अपराध में बेफिकीर लोग अज्ञात युवक को पीटते है इसका विवेचन प्रस्तूत कहानी में लेखक ने किया है।

'घुड़सवार' कहानी में अमरकांत ने जीवन के हर क्षेत्र में उत्तम पुरुष बने हुए ऐसे लोगों की कर्मठता

पर व्यंग्य करके मूल्यों के वास्तविकताओं के स्वप्न हो जाने का यथार्थ चित्रण किया है।

"विनोदी वृत्ति अपने आप में केंद्रित नहीं होती, वह हास्यास्पद स्थितियों और क्रियाओं के माध्यम से किसी बड़े सामाजिक अर्थ तक पहुँचती है। ऐसा ही 'घुड़सवार' कहानी में बताया गया है। किसी प्रकार से कलेक्शन नायक तहसिलदारी पा जाने वाले और चार साल तक इस पद पर कार्य करते चले आनेवाले बलवीर सिंह को नये कलेक्टर ने आदेश दिया कि दो महिने बाद घुड़सवारी की परीक्षा होगी और वह सामील हो जाए। बलवीर सिंह को लगा जैसे ताड़ के पेड़ पर चढ़ते-चढ़ते फिसलकर जमीन पर गिर गया है। सच तो यह है कि हाड़ मांस के जीवित घोड़े से संबंध होना स्वाभाविक था अंगरेजों के जमाने में साहबों के लिए घुड़सवारी आना जरूरी था। घुड़सवारी की परीक्षा में बलवीर सिंह फेल हो जाते हैं। फिर दो महीने बाद उन्हें घुड़सवारी की परीक्षा में बैठने का आदेश मिलता है। लेकिन भगवान जिसकी रक्षा करना चाहता है उसको कोई भी नहीं मार सकता। दो महीने बीतने के पहले ही पता नहीं क्या हुआ और जिलाधीश का अचानक तबादला हो गया। उसके साथ उसका नियम भी चला गया। दूसरे जिलाधीश ने बिना परीक्षा के ही एक बहुत प्यारा सर्टिफिकेट दे दिया। जिसमें एक वाक्य लिखा था 'वे एक मंजे हुए घुड़सवार हैं'।"[15] इस कहानी में घुड़सवारी की परीक्षा में बलवीर और घोड़े के कुछ पारस्पारिक क्रियाकलापों का बहुत जिवंत और व्यंग्यात्मक चित्रण मिलता है।

3.7 मनोवैज्ञानिक कहानी

संग्रह की आखिरी कहानी 'दुर्घटना' में नये जमाने के उसूलों के मुताबिक चलकर सफलता की सीढ़ी पार करते जाने वाले आदमी का समुख होता है जिसके आचार व्यवहार, मित्रता, रिश्तेदारी, विचार, आदर्श, त्याग आदि सभी चीजों के मूल में फायदे के हिसाब-किताब एक होशियारी होती है और जिसमें वह इतना झूठा, मक्कार हो जाता है कि दूसरा आदमी उसके फायदे नुकसान के तहत रह जाता है। "मित्रता या शत्रुता के काबिल हो जाता है। यह एक शहरी व्यक्ति के दुर्बल मानसिकता की कहानी है। कहानी में वह ग्रामीण व्यक्ति को तुच्छ समझता है। अचानक ट्रेन एक ऐसी जगह जा पहुँचती है जहाँ डाकुओं के

अप्रत्यशित आक्रमण की आशंका है। अब वह प्रायः गिडगिडाते हुए उसी गँवार से 'भइया' का रिश्ता जोड़ लेता है और उससे मदद की अपेक्षा रखता है ताकि संकट में उसकी सेवाएँ काम में आयें। कहानी के अंत में उसकी सहायता अत्यंत निरर्थक रूप में फूट पड़ती है और ग्रामीण नौजवान से कहता है, 'भइया जरा संभल कर चलना, मुझे तो हर क्षण तुम्हारी ही चिंता लगी रहती है।''[16]

निष्कर्ष

अमरकांत की कहानियाँ एक विशेष अर्थ में भारतीय हैं। वे सामान्य भारतीय व्यक्ति के संस्कारों, भावनाओं और भावुकता को भी व्यक्त करती हैं। इन कहानियों का मूलभूत गुण ही वह गहरी मानवीय करूणा है जो विविध रूप से उनके अत्यंत सहज लगने वाले व्यंग्यों के माध्यम से व्यक्त होता है। परिवारों, राजनीतिक लोग, तथा सामाजिक संस्थाओं सबकी आंतरिक स्थितियों का नक्शा अमरकांत अपनी कहानियों में खींचते हैं। लेकिन आजादी के बाद आम आदमी की जिंदगी जिन-जिन मोड़ों से गुजरती रही है यह कहानियों में साफ दिखायी देता है।

अमरकांत के 'मौत का नगर' कहानी संग्रह में सभी प्रतिनिधि कहानियाँ मौजूद हैं। 'डिप्टी कलक्टरी', 'जिंदगी और जोंक', 'दोपहर का भोजन', 'मौत का नगर', 'हत्यारे', 'मूस' आदि। अमरकांत की कहानियाँ बहुत खुब्रसुरती के साथ इस तथ्य को स्पष्ट करती हैं कि मौजूदा समाज व्यवस्था मानवीय मूल्यों को ध्वस्त नहीं करती बल्कि उनमें विपर्यय भी पैदा करती है। 'असमर्थ हिलता हाथ' कहानी में माँ की पुरानी प्रतिमा का प्रतीक रूप को दर्शाया है। 'घुड़सवार' व्यंग्य के माध्यम से निरूपित विसंगतियों की उपज है, 'हत्यारे' के वे नौजवान जिनकी शक्ति हत्या और व्यभिचार में खो गयी है। 'लड़की की शादी' कहानी में भ्रष्ट, मौकापरस्त, स्वार्थी, राजनीतिक नेताओं का चित्रण है। 'महान चेहरा' कहानी व्यवस्था की विकृति है। 'विजेता' कहानी आज की उक्त विसंगति और उसके साथ जुड़ी हुई छटपटाहट को बड़े अर्थपूर्ण ढंग से मूर्त करती है। 'फ्लाश के फूल' सामाजिक बदलाव के एक पहलू पर व्यंग्य करती है जो उसी का दूसरा पहलू 'छिपकली' इस कहानी में बताया गया है। 'महान चेहरा' कहानी में नवयुवक पर किये गए व्यंग्य को दर्शाया

है। 'जिंदगी और जोंक' कहानी में मनुष्य की जिजीविषा का चित्रण किया गया है और 'मौत का नगर' कहानी में हिंदू-मुसलमानों के आपसी कटु-मधुर संबंधों का वर्णन किया है। 'बहादुर' के माध्यम से एक घरेलु नौकर का मनोवैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया है। आदि कहानियों का निर्माण जीवंत वस्तु-शिला पर होता है। इसलिए वे पत्थर की तरह ठोस एवं कंक्रीट की तरह शक्ति संपन्न होती है।

अमरकांत की कहानियों की भाषा सहज, सरल तथा पात्र एवं परिस्थितियों के अधिक निकट है।

संदर्भ संकेत

1. मौत का नगर, अमरकांत ('हत्यारे' कहानी से), पृ. 107
2. वागर्थ, अगस्त, 2005, पृ. 29
3. अमरकांत के कृतित्व एवं व्यक्तित्व की पड़ताल, अमरकांत, पृ. 245
4. वही, पृ. 247
5. मौत का नगर, अमरकांत ('जिंदगी और जोंक' कहानी से), पृ. 186
6. वही, ('असमर्थ हिलता हाथ' कहानी से), पृ. 14
7. वही, ('लड़की की शादी' कहानी से), पृ. 109
8. कुछ कहानियाँ : कुछ विचार, विश्वनाथ त्रिपाठी, पृ. 19
9. मौत का नगर, अमरकांत ('मूस' कहानी से), पृ. 49-50
10. वही, ('बहादुर' कहानी से), पृ. 260-266
11. वागर्थ, अगस्त, 2005, पृ. 28
12. अमरकांत के कृतित्व एवं व्यक्तित्व की पड़ताल, अमरकांत, पृ. 158
13. मौत का नगर, अमरकांत ('मौत का नगर' कहानी से), पृ. 23-24
14. वही, ('सप्ताहांत' कहानी से), पृ. 255
15. वही, ('घुड़सवार' कहानी से), पृ. 82
16. अमरकांत के कृतित्व एवं व्यक्तित्व की पड़ताल, अमरकांत, पृ. 236